दरकती दीवार

लेखिका

डॉ. कुसुम द्विवेदी 'मानसी'
एम.ए., एम.एड., पी-एच.डी.

Divyansh Publications
दिव्यांश पब्लिकेशन्स

ISBN-978-93-84657-67-3

प्रकाशक :
दिव्यांश पब्लिकेशन्स
एम.आई.जी. 222, फेज–1,
एल.डी.ए. टिकैतराय कॉलोनी,
लखनऊ–226017
मो. 09415185960, 08960262646
E-mail : divyanshpublications@gmail.com

© रचनाकार

प्रथम संस्करण : 2016

मुद्रक :
भानु प्रिंटर्स
दिल्ली

भारतीय कॉपीराइट एक्ट के अंतर्गत इस पुस्तक की सामग्री के प्रस्तुतीकरण के सभी अधिकार '**दिव्यांश पब्लिकेशन्स**', एम.आई.जी. 222, फेज–1, एल.डी.ए. टिकैतराय कॉलोनी, लखनऊ–226017 के पास सुरक्षित हैं। अतः कोई भी सज्जन इस पुस्तक का नाम, टाइटिल–डिजाइन, रेखाचित्र आदि आंशिक या पूर्ण रूप से तोड़–मरोड़कर हिंदी अथवा किसी भी अन्य भाषा में छापने का प्रयास न करें, अन्यथा कानूनी कार्यवाही के हर्जे–खर्चे व हानि के जिम्मेदार स्वयं होंगे। इस पुस्तक में दिए गए विचार लेखक के निजी विचार हैं। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय–क्षेत्र लखनऊ होगा।

Title : DARAKTI DEEWAR
Written by : Dr. Kusum Divedi 'Mansi'

संकल्पों और सम्भावनाओं वाला काव्य संग्रह

आलोचना किसी काव्य रचना में दोष निकाल कर रद्दी की टोकरी तो भर सकती है लेकिन अपने खुश्क और शुष्क चिन्तन-मंथन के बाद भी यह नहीं बता सकती कि कोई कविता अच्छी कविता कब हो जाती है। मज़े की बात ये है कि आलोचक जी अगर स्वयं भी कवि न हों तो उनसे हिम्मत करके पूछा जा सकता है कि श्रीमन्! क्या आप ऐसी कविता लिख सकते हैं जिसके काल्पनिक शरीर के अंग आपके Dust Bin की शोभा बढ़ा रहे हैं? मेरे ख़याल से कोई अच्छा कवि ही किसी कविता का ईमानदार पारखी हो सकता है। जिस तरह माँ बनने के सुख दुख पर हज़ारों किताबों के पन्ने सफेद से स्याह किये गये, लेकिन सुख-दुख की उस मिश्रित माला का वर्णन कोई माँ ही कर सकती है, उसी तरह कविता और चिन्तन के जिस दौर से कवि/कवियित्री को गुज़रना पड़ता है उसका वास्तविक आभास एक पूर्ण कवि को ही हो सकता है। मेरी इस बात से आलोचक बिरादरी के लोग सहमत हों अथवा नहीं किन्तु वो इस बात से इंकार भी नहीं कर सकते कि कवि अपनी दुनिया का शुभ चिन्तक भी होता है।

शब्दों के ढेर से कुछ सधे हुए शब्दों का चयन करके उसे लय और सुर की माला में गूँथने का नाम शायरी नहीं है। इसके लिये ज़मीनों के सीनों की कसक, समन्दरों जैसी निःस्वर गहराई और आसमानों में विचरते स्वप्निल मंज़रों से मिल कर तैयार हुए भावों की आवश्यकता होती है। तब कहीं जाकर कालजयी कवितायें और शेर अपनी मंज़िल तक पहुँच पाते हैं।

डॉक्टर कुसुम द्विवेदी 'मानसी' की कवितायें पढ़ते हुए एक ताज़ा हवा के झोंके का एहसास हो रहा है। कहीं-कहीं तो उनकी कुछ कवितायें उनकी उम्र और तजरुबे को भी आँखें दिखाती नज़र आती हैं। 'आख़िर बड़ी हुई क्यों पापा' एक ऐसी कविता है जो कवियित्री की आँखों से बात

करती है और उसके क़लम की रोशनाई से अपने आपको भिगोती रहती है। पूरी कविता नारी जीवन के सबसे मधुर और यादगार ज़माने को अपने शब्दों के होंटों से चूमती रहती है। उनकी रचनाओं में वो बेताबियाँ भी दिखायी देती हैं जो कविता के माध्यम से दुनिया जीतने के लिए निकल खड़ी होती हैं लेकिन कविता का रास्ता बहुत दुश्वार, पथरीला और घुमावदार होता है। जहां तक पहुँचने में जीवन की पूँजी का बहुत सा हिस्सा ख़र्च हो जाता है। एक पक्ष यह भी है कि इंन्तिज़ार की दुनिया भी संन्यास और निर्वाण की लालसा की तरह कठिन और अधीरता पैदा करने वाली होती है।

डॉक्टर कुसुम 'मानसी' के काव्य संग्रह 'दरकती दीवार' की झिरियों से उनकी कविताएँ अपनी उपमाओं के साथ दिखाई देती हैं।

मुझे विश्वास है कि ये काव्य संग्रह अपने पढ़ने वालों से सम्मान ही नहीं, सनद भी हासिल करेगा और पाठकगण उनके दूसरे काव्य संग्रह की प्रतीक्षा भी करेंगे।

(मुनव्वर राना)

25/01/2016 एफ॰आई॰ धींगरा अपार्टमेन्ट, लालकुवाँ

लखनऊ

अपनी बात

हम भला कितना कहेंगे...
तुम भला कितना सुनोगे... ?

बस यूँ समझिये कि हर पल संघर्ष, कभी हालात से, कभी अपने आप से...वक्त बड़ा ही बेरहम रहा मेरे साथ...तजुर्बे देकर मेरी नादानियाँ छीनता गया और मैं हतप्रभ निहारती रही शून्य की ओर। सब कुछ अप्रत्याशित रहा इन चार-पांच वर्षों में। अगर मुझमें कुछ शेष रहा तो मेरा हौसला, जो पर्वताकार प्रश्नों से निरन्तर लड़ता रहा। जिदंगी पर कई बार पूर्णविराम लगते-लगते रिक्त स्थान छूट गया और मैं गिरते-गिरते उठकर पुनः संभलने लगी...।

यूँ तो ईश्वर की सत्ता में एक अटूट विश्वास था ही पर मुश्किलों में मुझे मेरे हनुमान जी ने हमेशा अपना कोई-न-कोई पर्याय भेज ही दिया...मंगलवार को हनुमान बाहुक पढ़ने के पश्चात् मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मुझसे ज्यादा बल, बुद्धि, विद्या का धनी कोई और नहीं।

लोग कहते हैं कि...अपने तो अपने होते हैं...किंतु मैं कहती हूँ कि कोई अपना होने से अपना नहीं होता, कोई भाई होने से भाई नहीं होता, कोई पिता होने से पिता नहीं होता, कोई माँ होने से माँ नहीं होती... जब जो जिस रूप में आप को स्वीकार करे वही अपना होता है। जननी होना आम बात है जन्म तो कोई भी दे सकता है, पर माँ होना उतना ही मुश्किल। मेरे तमाम ऐसे अनुभव रहे जब खून के रिश्तों से कहीं ज्यादा मन के रिश्तों ने साथ दिया। उन रिश्तों में मेरी बड़ी बहन, माँ सरीखी अनामिका मिश्रा, रीडर, मेरे बड़े भाई, एक अच्छे अभिभावक तुल्य, स्व. राजीव चतुर्वेदी जी (लेखक एवं व्यवसायी), कुशल सहयोगी बिन्दा

पाण्डेय जी, अनुज अंगद तिवारी, हमेशा हिम्मत दिलाने वाले आदरणीय लोकेश जी 'ग्राम्य विकास आयुक्त उत्तर प्रदेश' जिन्हें, बाप-भाई-बहन-माँ सब कुछ कह सकती हूँ। अशोक शुक्ला, आई.पी.एस., मेरे बेहद हितैषी एवं शुभचिन्तक यूँ कहें कि मेरा चलता-फिरता ए.टी.एम., भैया अनूप द्विवेदी इन सबके अनुग्रह को शब्दों में कहना संभव नहीं। उदारता की प्रतिमूर्ति आदरणीय ए.पी. मिश्र जी, एम.डी. पावर कॉरपोरेशन के स्नेह संबल ने हमेशा अभिसिंचित किया। बस इतना ही कहूँगी कि मैं हमेशा इन सब की अपेक्षाओं पे खरी उतर पाऊँ, भगवान हमारे रिश्तों को हमेशा जीवन्त रखे। हमारे और तमाम अपने जिनकी महती भूमिका रही जीवन के किसी न किसी पृष्ठ पर।

मेरी माँ आदरणीया सूर्यवती द्विवेदी जी मनसा वाचा कर्मणा परोक्ष-अपरोक्ष रूप से मेरे साथ हमेशा खड़ी थीं। आदरणीय पिता जी पं. खुशीराम दूबे (राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त) जिन्होंने कभी डॉट, फटकार, तो कभी प्यार दुलार से संबल दिया है। जिनसे विरासत में कविता लिखने का एक ऐसा हथियार मिल गया जो पीड़ान्तक सिद्ध होता है मेरे लिए। बड़े भैया श्री रंग द्विवेदी (डी.एम.) का चाहे अनचाहे आशीर्वाद मिलता रहा। दीदी संतोष एवं छोटे भाई डॉ. एच.एन. द्विवेदी (प्रोफेसर, बी.बी.डी) ने हमेशा भरपूर संभालने की कोशिश के साथ अपना स्नेह दिया।

मेरे जीवन मानस मिश्रा 'हनु' जिसने कुछ न समझने की उम्र में बहुत कुछ समझने की कोशिश की। मेरे जीवन का आधार बनकर खड़ा रहा मेरी पल भर की उदासी पर दस सवाल 'मम्मा क्या हुआ?' मेरे मुस्कुराने पर मुस्कुरा देता, मेरे रोने पर रोने लगता जिसने उदास रहने का हक तक छीन लिया। आञ्जनेय मेरी इस रचना को कालजयी करें।

अंत में कोटिशः धन्यवाद देना चाहूँगी श्री प्रदीप कुमार द्विवेदी, बी.एस.ए. सर जिन्होंने मुझे हमेशा प्रोत्साहित किया जीतने को प्रेरित किया, मैं मुक्त कंठ से उनकी आभारी हूं जिन्होंने निःस्वार्थ हमेशा साथ दिया। इसी आत्मीय सूची में प्रसिद्ध हास्य कवि राजेन्द्र पंडित व्यंग्यकार

अनुक्रम

संकल्पों और सम्भावनाओं वाला काव्य संग्रह	4
अपनी बात	6
सखाभाव में प्रार्थना	11
दीवार दरकती है	12
जीवन पृष्ठ	13
आखिर बड़ी हुई क्यूँ पापा?	14
तुम अपने से क्यूँ लगते हो...	17
गीत	18
प्यार की पराकाष्ठा	20
इस जीवन का क्या मतलब?	21
एक लड़की की आकुलता	22
टूटती उम्मीद	23
प्रेम गीत	25
साथी हुआ दुष्यंत है	26
ये सूनापन	27
कुछ शेर—आह	28
नवगीत	30
आखिर कब तक??	31
क्यूँ??	32
आज रुला लें	33
आज फिर	34
एक गीत	35
नियति	36
मेरा मौन	37
अपना रिश्ता	38
भावुक मन	39

हम दर्द के मारे 40
डगमगाते कदम 41
असह्य दुःख 42
मेरी संवेदना 43
तुम 44
भौतिकता का आदी प्यार 45
गीत 46
गीत 47
बिखराव 48
बंदिशें 49
जिंदा लाश 50
तुम्हें क्या लगा? 51
भाग्य 53
उहापोह 54
अतुकान्त गीत 55
वादे-इरादे 56
कुछ मुक्तक 57
कुछ मुक्तक 58
छोड़ना क्यों चाहते हो? 59
जिंदगी लगे है बद्दुआ 60
तुम क्या जानो 61
तुम आये नहीं 62
मुझे मालूम है 63
बारिश 64
काश 65
मेरा ये मौन भी... 66
घनीभूत पीड़ा 67
कब तुम याद नहीं आए हो? 68
मेरा न है कभी न था 69
एकाकी अनुराग 70
सुनो अभिमन्यू 71

सखाभाव में प्रार्थना

बल, बुद्धि, विद्या, दान, कीजे
क्लेश सब हर दीजिए,
हर भूमि की सार्थकता
को वृहद पर दीजिए,
अनुमान है बल का नहीं
हनुमान मैं सब जानती,
अनुनय नहीं अधिकार मैं समझूँ
मुझको मेरा वर दीजिए

दीवार दरकती है

दीवार दरकती है दहलीज पे खड़ी हूँ।
जाऊँ तो किधर जाऊँ कश्मकश में पड़ी हूँ॥

बाहर कदम रखूँ तो अपने ही बनें दुश्मन।
कोई गले लगाये और कोई मिले बेमन॥

भीतर जो मुड़ के देखूँ तस्वीर में जड़ी हूँ।
दीवार दरकती है दहलीज पे खड़ी हूँ॥
जाऊँ तो किधर जाऊँ कश्मकश में पड़ी हूँ॥

जीवन पृष्ठ

मेरे जीवन पृष्ठों को पढ़-पढ़ करना उपहास नहीं।
करो शृंखलाबद्ध भले ही पर होगा विश्वास नहीं॥

घोर निराशा के पथ पर भी होती कभी हताश नहीं।
मंजिल मेरी थी मेरी है थमता ये अहसास नहीं॥

खिले कुसुम कोमल शाखा का गर कर सको विकास नहीं।
गर्म वाष्प से नित प्रति सींचो ऐसे भी दो त्रास नहीं॥

शब्दों से परिचित होने का हुनर भी कोई खास नहीं।
रुखे अधरों की भाषा तुम समझ सको अभ्यास नहीं॥

आखिर बड़ी हुई क्यूँ पापा?

छोटी थी तो ही अच्छा था
आखिर बड़ी हुई क्यूँ पापा?

वो घर की छोटी अंगनइया
बाबा लेते रोज बलइंया,
भैया के कंधे से लदकर
जीने पर चढ़ने की जिदकर
अम्मा के सीने से लगकर
सोने के सुख से क्या बढ़कर,
कुछ न होकर भी सब कुछ थी
मालिक बनकर ही रहती थी,
कोई चपल चंचला कहता
कोई बहता झरना कहता,
मैं पंक्षी उन्मुक्त गगन की
रहती थी बस अपने मन की,
मेरा...मेरा ही होता था
बाकी सब हिस्सा बँटता था,
जब मिलती फटकार तुम्हारी
माँ का प्यार हमेशा भारी,
जाने फिर कब बड़ी हो गई
सजकर दूल्हन खड़ी हो गई,
चूड़ी बिन्दी सेंदुर तासा

रिश्तों की बदली परिभाषा,
जो तुमसे लग के रोयी थी
जड़वत खड़ी हुई क्यूँ पापा???
आखिर बड़ी हुई क्यूँ पापा?

बहू बनी बेटी से आकर
सब खोया कुछ भी न पाकर,
उर अन्तस में दर्द समेटे
कहते भी तो किससे कहते,
अनसुलझी बातों में उलझी
सुनती रहती सबकी कुछ भी,
आज चंचला बस चुप-चुप सी,
अनुभव की पीड़ा में धुत सी,
साड़ी बिन्दी सेन्दुर पहने
नख-शिख तक गहने ही गहने,
फिर भी मन खंडहर हो जाता
राजमहल में घर न पाता,
नए-नए सब लोग नया घर
नई रीत चलना नव पथ पर,
अपना सा लगता न कोई
न जाना पहचाना कोई,
सब की सुनना कुछ न कहना
बस सबकी हाँ में हां करना,
दूर हुए मेरे सब अपने
वो बचपन के झूठे सपने...
जिसमें अपने घर होती थी
मरजी से जगती सोती थी,

अम्मा की उँगली होती थी
पापा का संबल होती थी,
भैया का भी काम बँटाती
भाभी की बिटिया बन जाती,
इतना भी क्यूँ दूर कर दिया
क्यों मुझको मजबूर कर दिया,
इतनी उम्र जहाँ काटी है
उसकी याद भुलाऊँ कैसे ?
आज मिले जो नये लोग
उनसे अधिकार जताऊँ कैसे ?
घूंघट में अक्सर रोती हूँ
बाहर मुस्काती आती हूँ,
याद तुम्हारी जब आती है
भीड़ में तन्हा हो जाती हूँ,
जो सबसे लड़ती रहती थी......
खुद से लड़ी हुई क्यूँ पापा ???
आखिर बड़ी हुई क्यूँ पापा ?

तुम अपने से क्यूँ लगते हो...

आज मुझे इक बात बताओ
तुम अपने से क्यूँ लगते हो... ?
खुलकर आंख न खुलना चाहे
उस सपने से क्यूँ लगते हो ?
प्रेम पवित्र बना आराधन
अब प्रतिपल पूजन होता है...
यज्ञ आचमन और आरती
प्रतिपल एक हवन होता है...
सांसों की माला के मनके तुम जपने से क्यूँ लगते हो ?
आज मुझे इक...

जीवन के कटु-तिक्त-कसैलेपन को
मधु का स्वाद मिल गया... ।
भाषा की दुरुहता को ज्यों
शब्द कोष, अनुवाद मिल गया ॥
अब प्रत्येक परीक्षा में तुम सरल प्रश्न से क्यूँ लगते हो...
आज मुझे इक...

प्रथम मिलन पर लगा न जाने क्यों
तुम सौ-सौ बार मिले हो ?
कई-कई जन्मों के धागे
लेकर मेरे साथ सिले हो ?
मोहन जैसे पूर्व जन्म के तुम परिचय से क्यूँ लगते हो...
आज मुझे इक...

गीत

रह-रहकर याद आ जाते हो
मीत मुझे तड़पा जाते हो,
एक मात्र बस तुमको चाहा
निशिवासर तुमको अवगाहा,
भीतर बाहर तुम ही तुम हो,
उर अन्तस ने तुम्हें सराहा,
उन बहियों की उन छहियों की याद दिलाने आ जाते हो
मीत मुझे तड़पा जाते हो...

अधरों की भाषा भी तू है
मेरी अभिलाषा भी तू है,
कहीं कोई भी बात चले पर...
मेरी चर्चा में बस तू है,
पीछे अगर लौटना चाहूँ, पुनः बुलाने आ जाते हो,
रह-रह कर याद आ जाते हो
मीत मुझे तड़पा जाते हो...

आ जाओ बांहों में भर लूँ
सांसों से उर बीच उतर लूँ,
तन, मन, जीवन सब स्वीकारूँ
पल-पल अपना तुम पर वारूँ,
बोलो स्वाती चातक को तुम,
रुला-रुला के क्या पाते हो,
मीत मुझे तड़पा जाते हो...

रह-रह-कर...
तुमसे ही सुख चैन हमारे,
तुम ही तो दिन-रैन हमारे,
पीर संजोये कुछ कहने को,
उकसाये हैं बैन हमारे,
अधसोई अलकों पलकों को रोज सुलाने आ जाते हो,
मीत मुझे तड़पा जाते हो...

मन में किंचित धीर नहीं है,
पर अधरों पर पीर नहीं है,
व्यथा पोथियाँ मन की मन में,
कस लूँ वो जंजीर नहीं है,
पीछे अगर लौटना चाहूँ पुनः बुलाने आ जाते हो,
मीत मुझे तड़पा जाते हो...

प्यार की पराकाष्ठा

प्यार जिसको किया तर-बतर कर दिया
और तरसते रहे उम्र भर प्यार को...
हम अधूरे रहे हम अभागे रहे
फिर भी पूरा परोसा किए प्यार को॥
एक अल्हड़ नदी वेग से बह चली
तोड़कर बंध सारे तेरी ओर को...
हर निशां को मिटाती चली बेधड़क
छोड़ती आई अपने हर इक छोर को...
कैसे मीठी नदी भी तरसती रही
एक खारे समंदर की मनुहार को...
प्यार जिसको किया तर-बतर कर दिया...
और तरसते रहे उम्र भर प्यार को

जिंदगी से अजब जंग चलती रही...
प्यार आधा-अधूरा ही मिलता रहा,
लाख बलिदान देके भी, कुछ न मिला...
मन तड़पता रहा तन सुलगता रहा,
कोई अपना मिले सिर्फ अपना लगे,
कब से मांगा किए ऐसे घर बार को
प्यार जिसको किया...

इस जीवन का क्या मतलब ?

इस जीवन का क्या मतलब, जो साँसों पर ही भार हुआ,
खुद से खुद की कठिन लड़ाई में
उलझी सी एक पहेली,
राह नहीं कोई दिखती है,
पीड़ाओं की बनी सहेली,
जो भी जितना सुख भोगा था, सपनों का संसार हुआ।
रोग शोक ने घेर लिया है,
न जाने कब तक जीवन है,
मन में माँ तेरी ही ममता
बाकी तो सब रीतापन है,
खुशियों पर गम का पहरा मेरे जीवन का सार हुआ
जीवन के इस बियाबान में,
निपट अकेली अकुलाती हूँ,
अपनी व्यथा अकेलेपन से,
कहते-कहते सो जाती हूँ,
होते भोर वही अनसुलझी बातों का अम्बार हुआ,
इस जीवन का क्या मतलब जो सांसों पर ही भार हुआ।

एक लड़की की आकुलता

मैंने मन का मीत न पाया

जब-जब मैंने हँसना चाहा तब तब आकर रुला गए तुम
तब-तब तुम आकर रुला गए,
जीवन भर चलने वाले रिश्ते को
बस एक पल में भुला गए तुम,
सोचा था कोई होगा जो पीड़ा में भी अपना लेगा
पूरा करने की खातिर वो मेरा हर सपना ले लेगा,
आज नहीं आंसू थमते हैं रोते मन भरता ही नहीं,
किसको मन की पीर दिखाऊं लगता कोई सगा नहीं,
जिसने मुझको जन्म दिया वो मेरे हैं, बेशक सच है,
पर उनको कड़वा सच बतलाना धरती फटने जैसा है,
मैंने मन का मीत न पाया तुमने दे सर्वस्व दिया,
सबसे बड़ी अभागन होने का कैसा वर्चस्व दिया,
राजमहल में रहकर भी खंडहर-सा लगता मेरा मन,
आकुलता, लाचारी की बस भेंट चढ़ा तन, मन, यौवन
निकल नहीं सकती इसमें रहने की भी मजबूरी है,
दूर रहूं तो प्राण निकलते पास रहूं तो दूरी है,
जाने कितनी बार कलेजा फटा दरार न बाहर आई,
इस पतझड़ जैसे जीवन में बार अनेक सुनामी आई,
लेकिन कभी बसंत न आया, जिसकी तकती राह रही,
पपिहे का स्वाती न आया जब तक उसमें आह रही।

टूटती उम्मीद

तुमने मजबूर ही इस तरह कर दिया
दूर रहने का हमने इरादा किया,
मौन अधरो की भाषा न समझे कभी,
कैसे निर्मम बने रह गए इस कदर,
हाय! संवेदना तुमको छू न सकी,
दम निकलने से पहले कतर डाले पर,
रंग से जो भरी थी कभी जिंदगी,
इसके हर पृष्ठ को तूने सादा किया,
तुमने मजबूर ही इस तरह कर दिया...

हाथ तुमने मिलाया उन्हीं से सदा,
जिनकी नजरों को थे हम गवारा नहीं,
डूबती नाव से चीखते हम रहे,
कैसे यह कह दिया कि पुकारा ही नहीं,
रास आयीं समर्पण की बातें नहीं
या कि ऐतबार हमने जियादा किया,
तुमने मजबूर ही इस तरह कर दिया...

इतनी खामोशियां इतनी मायूसियां
दे दिया क्यूँ भला उम्र भर के लिए,
जो भी उम्मीद थी सब लगी टूटने,
हमसफर न कोई इस सफर के लिए

हाथ की इन लकीरों से लड़ जाऊंगी
मुझको जीना भी है, खुद से वादा किया...
तुमने मजबूर ही इस तरह कर दिया...

तेरे हर दर्द को सह गए इसलिए
एक विश्वास था तू सुधर जाएगा,
घर बचाने की करते कवायद रहे
मन ये कहता रहा सब संवर जाएगा।
एक संपूर्णता जो कि तुझसे ही थी
तूने उसको भी तो आधा-आधा किया...
तुमने मजबूर ही इस तरह कर दिया
दूर रहने का हमने इरादा किया...

प्रेम गीत

वो कभी बाहों के द्वारे, वो कभी नयनों के द्वारे,
तोड़ सारे बंधनों को जेहन तक आए...
दिन वो फिर से याद हो आए॥

याद है कागज की कश्ती वो जहां लहरों की मस्ती,
हाथ में दे हाथ खोये भूल बैठे सारी हस्ती,
जब कभी छाईं घटाएं, ढूंढती तुमको सदाएं,
वेदना से नैन अक्सर सजल हो आए
दिन वो फिर से याद हो आए॥

दर्द जब भी हद से गुजरा, पंक्तियां तुम पर बनी थीं,
भावनाओं के क्षितिज पर तितलियां अक्सर उड़ी थीं,
जब भी तन्हाई सताई, न पड़ा कोई दिखाई,
तब उभर कर सामने तुम गजल हो जाए,
दिन वो फिर से याद हो आए॥

वो दिसंबर का महीना, उस घने कुहरे में जाना,
शीत से कंपित हुआ तन, गर्म सांसों में नहाना,
क्या कशिश थी, क्या कसक थी,
मीलों चलने का बहाना,
साथ तेरे मन के खंडर महल हो आए,
दिन वो फिर से याद हो आए॥

साथी हुआ दुष्यंत है

मन मरुस्थल हो गया
साथी हुआ दुष्यंत है
खो चुकी अस्तित्व
जीवन के क्षणों का अंत है।
एक अंजुरी धूप को मन
आदतन तरसा किया
और हासिये में बस
अमावस्या का तम बरसा किया।

ये सूनापन

ये सूनापन कब तक आखिर
यूँ ही रहेगा जीवन में,
अँधियारे से डर-डर करके,
सिमट रही निज तन-मन में,
यूँ तो मैंने दीप जलाए, अक्सर सूनी राहों पर,
अपनी सब खुशियां दे डाली थोड़े से अपनेपन पर,
तब नहीं सोचा दिन भी ये होगा,
कोई न होगा उलझन में,
ये सूनापन कब तक आखिर यूँ ही रहेगा जीवन में।

कुछ शेर

आह

रोने की वजहें बहुत हँसने की दो-चार।
फिर भी क्यूँ थमती नहीं जीवन की रफ्तार॥

हम जरा-सा रिवाजों के क्या खिलाफ हुए।
सारे अपने ही ढूँढने लगे खंजर लेकर॥

उजड़े हुए चमन से विदा चाहती हूँ पर।
ये जान बिन तुम्हारे निकलती भी तो नहीं॥

वो विकल्पों से घिरा था मैं अकेली बस अकेली।
अब भला मनुहार न करती तो फिर जाती कहाँ?॥

तुमने मुझको नहीं-झिंझोड़े थे जज्बात मेरे।
तुम्हें तो पता था तुम और बारिश हमेशा साथ अच्छे लगते हो॥

सुनो बारिश! लुभाती हो भले तन को मगर मन को नहीं।
बहाने भीगने के रो लिए जी भर यही कुछ कम नहीं॥

जिंदगी के रास्ते सब बंद से लगने लगे।
पांव मेरे थक गए और थक के फिर चलने लगे॥

ये कैसा दर्द कि खुद से ही बयां कर पाऊँ।
जिंदगी पांव पड़े और मैं मरना चाहूँ॥

जिसको जितना चाहा उतना ही दूर हुआ।
हर बार ये मन किस्मत के हाथों चूर हुआ॥

कोई जब पूछ बैठता है हालात मेरे।
सोचती हूँ कि क्या बताऊँ क्या छुपा जाऊँ॥

यूँ पल भर का सुकूं देकर मुझे बच्चों सा न बहला।
मिले तो सब मिले मुझको जरा आदत पुराना है॥

सहारे भाग्य के रहकर नहीं पल-पल गुजारेंगे।
हम अपनी किस्मतों की हर लकीरें खुद संवारेंगे॥

वो तहकीकात, गवाह, सुबूत में ही उलझा रहा।
मुझे तो मुहब्बत थी बस इतना ही काफी था॥

शिकायत ये नहीं तकलीफ में कैसे जिए, कब तक।
शिकायत है कि देकर छीनता मुझसे ही क्यूँ आखिर?

मैं सच सारे कहूँगी हाँ मगर विश्वास कब किसको?
वो अक्सर जीत जाता झूठ की दो-चार कसमों में॥

नवगीत

अभी हम लिखे जा रहे हैं कहानी,
पता क्या बहेगा ये किस ढाल पानी,
अभी पास बैठो ये लगने दो तुम हो,
आने दो सपनों में थोड़ी रवानी।
चलो साथ मेरे न राहो से पूछो,
कल रात की तुम न बांहों से पूछो,
तुम्हारा ही सिर पा गेसू तुम्हारे,
बची खुशबूएं हैं तुम्हारी निशानी...
ये लोरी सुनाकर सुला तो न दोगे,
मुझे तुम जेहन से भुला तो न दोगे,
इसे बिन पते की न पाती समझना,
तेरे नाम की है ये मीरा दिवानी...
दिल पूछता है कि तुममें छुपा क्या,
जो तुम इतने प्यारे हो तुममें लिखा क्या,
जो पढ़ती ही जाती हूं पन्ने तुम्हारे,
मुझे लग रही है ये मेरी कहानी...
अभी हम लिखे जा रहे हैं कहानी,
पता क्या बहेगा ये किस ढाल पानी।

आखिर कब तक??

आखिर कैसे मन बहलाऊँ
उस शापित बीते कल के पल...
सोचूँ...डूबूँ फिर उतराऊँ
आखिर कैसे मन बहलाऊँ

सब कुछ डाल नियति के माथे
बीते कल सा आज गँवाऊँ,
या घुटनों से चलते-चलते
अपने पैरों पर आ जाऊँ
आखिर कैसे मन बहलाऊँ??

क्यूँ??

हमेशा जानकी देती परीक्षा राम ना देते?
हुए पतिदेव तो क्या कोई भी तोहमत लगा देते?
भला पुरुषों में तुम पुरुषोत्तम कैसे हुए राघव?
धरम पति का नहीं आया तो राजा का निभा देते॥

आज रुला लें

आज रुला ले जी भर साथी
अब के बाद नहीं रोयेंगे॥

आँखों का दरिया उतरा है
बह आया हर बांध तोड़कर,
आज हृदय भी टूट गया है,
कब से खुद को जोड़-जोड़कर
खोते आये अब तक सब पर
अब के बाद नहीं खोयेंगे

जाओ मुक्त हुए तुम अब से
जाती हूँ पूरे तन-मन से
तेरा तुझको अर्पण करके
विदा माँगती सजल-नैन से
सपनों के उस ताजमहल में
अब के बाद नहीं सोयेंगे
आज रुला ले जी भर साथी
अब के बाद नहीं रोयेंगे॥

आज फिर

आज फिर आँसूँ बहे हैं अनवरत, अविराम, अविचल
युद्ध सा कोहराम प्रतिपल
हूँ तुम्हें आवाज देती......
अनसुना मत आज करना
प्रेम का पर्याय लिखना॥

एक गीत

सफर में शाम हुई है किधर को जायेंगे
इस शहर में न कोई घर किधर को जायेंगे ॥

लौटते घोसलों में देख के परिंदों को...
शाम आयी खयाल आया कि घर को जायेंगे

घोर बारिश उदास शाम है तनहाई है
हर इक किवाड़ बन्द हैं किधर को जायेंगे

बस यही सोच के चौराहे पे खड़ी हूँ मैं...
यहीं मिलते हैं रास्ते यहीं वो आयेंगे

नियति

जाने क्या मंजूर नियति को,
आखिर ठाना क्या मन में,
दिन के दिन बेचैनी रहती,
रात गुजरती उलझन में,
जीवन इतना कठिन नहीं है,
जितना कठिन बना डाला है,
लोगों से अमृत कहती हूँ,
हाथ भरा विष का प्याला है,
इस दुनिया से रोना कैसा नहीं कलेजा पाहन में,
दिन के दिन बेचैनी रहती रात गुजरती उलझन में।

जाने क्या मंजूर नियति को?
नींद बड़ी प्यारी आती है,
जब भी रोते जी भरकर,
मन करता है सुबह न आती,
आँखे न खुलती अर्से भर,
काश कोई आकर लिख जाए कुछ भी इस कोरेपन में,
दिन के दिन बेचैनी रहती रात गुजरती रहती उलझन में॥
जाने क्या मंजूर नियति को...!!

मेरा मौन

मौन मेरा मत मुखरित करना
फिर तो जाने क्या होगा,

भरम बना जो कुछ लोगों का
कुसुम सदा ही बहुत सुखी है,
किसका कहां नसीब कुसुम-सा,
उसके जैसी कौन खुशी है,
और सराहों नहीं मुझे बस
आंखों में अब जल होगा...
जो टूटा यह बांध, धार फिर बांध सकेगा न कोई
जो रोई ये आंखें अनवरत, पोंछ सकेगा न कोई
होंठ सिले बैठी हूं बस ये सोच कि शायद कल होगा।
मौन मेरा मत मुखरित करना
फिर तो जाने क्या होगा...

दिशा भ्रमित हूं नई राह है, पथ बिल्कुल अन्जाना सा
न कोई अपना लगता है, न जाना पहचाना सा
ऐसे में उम्मीद करूं क्या कभी कोई संबल होगा,
मौन मेरा मत मुखरित करना
फिर तो जाने क्या होगा...

अपना रिश्ता

तुम क्या जानो मेरे अपने मन के इस अनुबंधन को
शाख बबूलों की मत समझो खुशबू वाले चंदन को,

प्यार हमें तुमसे है कितना ये अपने से ही पूछो ?
प्रश्न करो मुझसे पर उत्तर इक पल को खुद में ही सोचो
तुम गंगा हो, मैं यमुना हूं देखो अनुपम संगम को... ।

जख्म मेरे नासूर बने हैं, जब भी हवा लगी इनको,
नादानी तेरी, अनचाहे रस्ते ले जाती मुझको,
छोड़ न देना इन दोषों पर जीवन के स्पंदन को
तुम क्या जानो मेरे अपने मन के इस अनुबंधन को...

मेरे मन के मीत मुझे ले आज क्षितिज के पार चलो,
प्यार, प्यार बस प्यार जहां हो उस सीमा के पार चलो,
यकीं करो हर उपलब्धि बस आएगी अभिनंदन को,
शाख बबूलों की मत समझो खुशबू वाले चंदन को

भावुक मन

विकल हुआ भावुक मन मेरा
कैसे इसको समझाऊँ,
मानवता हैवान हुई है,
तजकर इसे कहां जाऊं,
रह-रहकर तूफान खड़ा हो जाता है,
अन्तर्मन में,
पीड़ा की शृंखला पुनः ले आती
अश्रु नयन में,
अपनी करुण कहानी कहने पास भला,
किसके जाऊँ??

हम दर्द के मारे

दिलों से खेलने वाले खिलाड़ी वो पुराने थे,
मगर हम दर्द के मारे खुदा उनको समझ बैठे,

चैन वो ले गए सारा, बची बेचैनियां मेरी,
हकीकत दिल की सुनने को, रही खामोशियां मेरी,
इन आंखों का ही था धोखा, वो पेशेवर सयाने थे,
मगर हम दर्द के मारे, खुदा उनको समझ बैठे,

नहीं उम्मीद थी उनसे अधर में छोड़ जाने की,
बड़ी मासूमियत के साथ बरबादी दिखाने की,
खिली कलियां मसलने के वो आदी थे, दिवाने थे,
मगर हम दर्द के मारे खुदा उनको समझ बैठे।

डगमगाते कदम

प्राण प्रण से अगर साथ रहना नहीं,
ये कदम डगमगाए तो कहना नहीं।

जिस्म के जंगलों की नाहीं थाह है,
मंजिले लाख जिनकी खुली राह है,
ये और बात है, आस तेरी लगी,
तुझको पाने की इक आस है, चाह है।
टूट जाए जो उम्मीद की डोरियां,
फिर से बंध के न आयें तो कहना नहीं...।

यार तू बेफिकर इसलिए क्या पता...
दर्द की इंतिहा तू क्या जाने भला
हाल कैसा है आकर कभी देख ले...
बन गई जिंदगी भूला वादा तेरा,
उठ गए गर कदम आज दहलीज से
फिर से मुड़ के न आएं तो कहना नहीं...

प्राण प्रण से अगर साथ रहना नहीं,
ये कदम डगमगाए तो कहना नहीं।

असह्य दुःख

कई दिनों का ठहरा हुआ दुःख,
आज जैसे मेरे काम आया,
जितना ही रोई आराम आया,
ये अवसाद तो नए जीवन का,
अतिथि सा हो गया,
जो बिना निश्चित तिथि के कभी भी आ गया
तमाम तरह के विचारों में उफनाती हूं,
फिर रह-रहकर उठकर बैठ जाती हूं,
चौंक-सी जाती हूं भाग्य के इस खेल पर,
मन के बेमेल पर,
यूं तो मौत का खौफ तो हर किसी को,
मगर मैं जिंदगी से खौफ खाती हूं
दुनिया की सारी चकाचौंध मेरे मन में सुलगती है,
ये दुःख की बदली भी उस,
सुलग को ठंडा नहीं कर पाती,
जिंदगी बबूल के पेड़ की बगिया सी है,
जिसमें सिर्फ कांटें हैं।
दूर-दूर तक सन्नाटे हैं,
ढोने को बची है तो सिर्फ जिंदा लाश,
दुनिया के लोगों के नए-नए उपहास।

मेरी संवेदना

मुझे मेरी संवेदना अक्सर रुलाती है,
मेरी जिंदगी पर प्रश्न-चिह्न लगाती है,
क्योंकि मुझे साथी का प्यार चाहिए था,
सुविधाओं का अम्बार नहीं,
नोटों का संसार नहीं
उपेक्षा का उपहार नहीं,
मुझे लगता है मैं टूट जाऊँगी,
कभी न सिमटने के लिए बिखर जाऊँगी,
मौन होकर हमेशा को शांत हो जाऊँगी,
क्योंकि मैं सम्मान की आदी रही हूँ,
पालतू कुत्ते का जीवन नहीं जी पाऊँगी,
इस आधारहीन जिंदगी की अनसुलझी
पहेली कैसे सुलझाऊँ।
मेरा अन्तर्द्वन्द्व मेरा देवता भी नहीं सुनता किसे सुनाऊँ???

तुम

मैंने कहा तुम रुलाते बहुत हो,
उसने कहा याद करो...
हँसाया भी तो था,
मैंने कहा एक वक्त था,
जब तुम मुझे प्यार करते थे
उसने कहा...तब अकेला था।
मैंने कहा वादा था तुम्हारा
साथ निभाने का,
फिर छोड़ क्यूँ दिया?
उसने कहा...फैसला तब भी मेरा था,
फैसला अब भी मेरा है।
मैंने रोकर कहा क्या करूँ तुम यादों से
जाते नहीं हो,
उसने मुस्कुराकर कहा...
और तुम याद आते नहीं हो।

भौतिकता का आदी प्यार

मैंने कहा सुनों मैं तुम्हें खंडहर से घर में
राजमहल सा मन दे सकती हूं॥
मैं तुम्हें टूटकर ताउम्र चाहूंगी...
ये दावा भी कर सकती हूं।
फिर तुम मेरे हो क्यों नहीं जाते?
उसने कहा...
किसी को अपना बनाने के लिए प्यार ही काफी नहीं।

गीत

जाएं चाहे जहां कोशिशें लाख हों,
पर ये मन है कि तुम बिन बहलता नहीं।
तुम ही तो आस हो, तुम ही विश्वास हो,
तुम ही तो तृप्ति हो, तुम ही एहसास हो,
तुम ही तन मन भी हो, तुम ही जीवन भी हो,
तुम ही तो हर जनम मेरे मधुमास हो...
चाहे कितना भी खुद को संभाले कुसुम
पर ये मन है कि तुम बिन संभलता नहीं।
कितनी रंगी है दुनिया नजारे अजब
प्रीति रचने के माहिर सितारे गजब
खूबियां और तारीफ से लैस हैं
जाने कितनों के दिल को निहारें शलभ...
कोई कितना भी पिघलाए मन को मेरे
पर ये मन है कि तुम बिन पिघलता नहीं...
आज बादल भी है, आज बिजली भी है,
तेरे सान्निध्य को एक पगली भी है,
क्या तुम्हें है पता, क्या तुम्हें है खबर,
पास तुम जो नहीं गम की बदली भी है,
हो रही है, चुभन अब तो मन को बहुत,
शूल है कि ये तुम बिन निकलता नहीं...
जाएं चाहे जहां कोशिशें लाख हों,
पर ये मन है कि तुम बिन बहलता नहीं॥

गीत

टूटकर भी हूं कैसी समूची खड़ी
बस तुम्हारे-तुम्हारे-तुम्हारे लिए,
हो यकीं गर कि तुम मुझको मिल जाओगे
छोड़ दूं सारी दुनिया तुम्हारे लिए...
नाचता मोर देखे यहां हर कोई
काँपता पैर किसको दिखाई पड़े,
तालियां बज रही हैं विरह गीत पर
और हृदय चीखता है तुम्हारे लिए...
जाने किस-किस की हैं उठ गई उंगलियां,
लोग अक्सर गिनाने लगे गलतियां,
कोई राधा कहे कोई मीरा कहे,
गीत गाती हूं तो बस तुम्हारे लिए...
लोग कहते हैं कि इस शहर में भला
इस कदर आना जाना क्यूं लगा तेरा...
हम बहाने बताते चले आए पर
रोज आते हैं, तो बस तुम्हारे लिए...
टूटकर भी हूं कैसी समूची खड़ी
मेरी सांसों का संबंध तुमसे ही है...
पूरे जीवन का अनुबंध तुमसे ही है,
जख्म पर जख्म देती चली जिंदगी
फिर भी जीते हैं, तो बस तुम्हारे लिए...
टूटकर भी हूं कैसी समूची खड़ी

बिखराव

बिखरी-बिखरी सी जिंदगी अपनी
काश! होती कोई खुशी अपनी...

तुम इस नदी की आस छोड़ कहीं दूर बसो
कर सकी दूर नहीं खुद की तिश्नगी अपनी

बिखरी-बिखरी सी जिंदगी अपनी...
काश! होती कोई खुशी अपनी...

बंदिशें

दायरों बंदिशों की पड़ी बेड़ियां
इनसे दामन छुड़ाएं तो कैसे भला...
सहमी सहमी सी हैं, सांस हर नब्ज पे
इसको हिम्मत बंधाएं तो कैसे भला...
तेज हैं आंधियां हर तरफ से कुसुम
दीप की लौ बचाएं तो कैसे भला,
प्रश्न ही प्रश्न हैं न समाधान है,
जिंदगी तुझको सुलझाएं कैसे भला।

जिंदा लाश

अब तो जिंदा हैं लाश जैसे हैं,
प्राण कब के निकल गए तन से,

जिंदगी नाम को हमारी थी
आखिरी सांस भी तुम्हारी थी
तेरे खुशियों के लिए ऐ साथी
बोल दे कब कहाँ पे हारी थी
मैंने वादे तो सब निभा डाले
तू ही फिर हार चला क्यूं प्रण से ?
अब तो जिंदा लाश जैसे हैं

बेवफाई जो तू नहीं करता...
यूं लबों से हंसी नहीं जाती
तेरा दामन जो साथ होता तो...
दूर मुझसे खुशी नहीं जाती
अब बहुत दूर जिंदगी लगती
जैसे कोई हार चला हो रन से...

तुम्हें क्या लगा ?

तुम्हें क्या लगा मैं टूट जाऊंगी,
थक-हारकर भाग्य पर आ जाऊंगी,
ये क्यूं नहीं लगा कि,
अंग से भले कोमल,
पर इरादों से मजबूत हूँ,
किसी गवाह की जरूरत नहीं,
खुद में पुख्ता सुबूत हूँ,
मैं नियति, नाश-निर्माण हूँ,
सफलता का प्रमाण हूँ।
अगर मैं मृत्यु हूँ तो,
मैं ही प्राण हूँ,
तुम्हें क्या लगा मैं बिखर जाऊंगी,
कभी न सिमटने के लिए,
सुनो! विस्तार हूँ,
आत्मा का संचार हूँ,
प्रेम-पीयूष की कभी न
थमने वाली धार हूँ।
समाज की बिवाई नहीं,
जगत की इकाई हूँ,
सृजन मेरी गोद में पलते हैं,
प्रलय भी मुझसे ही निकलते हैं,
तुम तो महज आवरण हो,

मैं आचरण हूँ,
सृष्टि का प्रारंभिक व्याकरण हूँ।
नारी शक्ति का ही दूसरा नाम है,
जगत को जन्मने का आयाम है,
तुम भी तो जन्मे हो किसी नारी से,
मेरी ही जैसी दोधारी से,
तुमसे भला क्या डरना,
मैं धरती हूँ पृथ्वी हूँ,
तुम्हारा आकार हूँ, तुम्हारा हर प्रकार हूँ
पुरुष : तुमने तो केवल युद्ध लड़े
साम दाम दंड भेद सब कुछ किए,
पर सृजन और उपसंहार लिखने की आदी,
मैं ही रही,
खलनायक नहीं, निर्णायक रही,
तुम्हारा भविष्य बनाती रही।

भाग्य

हुए कुर्बान जिनपे भी वही अक्सर रुला देते
मैं जी भर रो चुकी कब की न आकर क्यूं मना लेते ?

नदी है जोर की देखो इधर हरगिज नहीं आना
भले ही वेग हो कितना है सागर में समा जाना...
लिखा है भाग्य में इसके कि साहिल छूटता देखे...

हुए कुर्बान जिनपे भी वही अक्सर रुला देते
मेरे चेहरे पर जो चस्पा उसे कब तक छुपा पाती
दुआ जीने की कब मांगी मुझे बस मौत आ जाती
तमन्ना है तो बस इतनी वो साँसें टूटता देखें...
हुए कुर्बान जिनपे भी वही अक्सर रुला देते।

उहापोह

क्या लिखूँ? कितना लिखूँ? कब तक लिखूँ?
सब कम ही लगता...
वक्त हो बेरहम बैठा
हर कोई अपना खड़ा है प्रश्न अगणित हाथ लेकर
क्या? कहाँ से बात खोलूँ
हर बात पर ही मन दरकता...।
हाथ की ऐसी लकीरें...
जिसको चाहूँ वो ही तोड़े
हार बैठी बात कहते और कितनी दूं परीक्षा?
दर्द अधरो पर भरे हैं पर जमाना कब समझता।
शर्त है उसकी अजब सी
टूट जाऊँ उठ सकूँ न...
हां मगर सारस जो ठहरी...सांस का आधार वो ही
दूर रहकर मन सुलगता॥
दूं भला क्या दोष उसका
वो भी तो अपना है आखिर
जब सभी अपने तुले हों...
फिर वो ही कैसे पीछे रहता।
क्या लिखूँ? कितना लिखूँ? कब तक लिखूँ?
सब कम ही लगता...॥

अतुकान्त गीत

सारे सपने सारे अपने
सब ले जा सब कुछ देती हूँ,
प्यार भला कोई भीख में पाया?
मैं भी कैसी जिद करती हूँ...
मेरा तेरा मेल नहीं है
प्यार ये कोई खेल नहीं है
मैं तेरी पर तू उसका है जा तुझको जाने देती हूँ।
प्यार भला कोई भीख में पाया?
मैं भी कैसी जिद करती हूँ...
सारे सपने, सारे अपने...।

टूट रहा अन्तर्मन ऐसे
आंसू में आलिंगन जैसे
काश! कि तुझ संग आह न जाती न्योछावर हर सुख करती हूँ।
सारे सपने, सारे अपने...।
प्यार भला कोई भीख में पाया मैं भी कैसी जिद करती हूँ॥

आने वाला कल भी ले जा
बीते कल के पल भी ले जा
रिश्तों की फेहरिश्त जो पाई इक-इक कर वापस करती हूँ।
सारे सपने, सारे अपने...।
सब ले जा सब कुछ देती हूँ॥

वादे-इरादे

वादे-इरादे वो कस्म-ए मुहब्बत
सब कुछ भुला के कहाँ को गए,
इक अनबुझी प्यास दिल में जगा के
न जाने जहां में कहां खो गए।
जाते ही तेरे जमाने की जालिम निगाहें बदलने लगीं,
वो वादियां पहले दिलकश थीं लगती वो आंखों को खलने लगीं,
वो बारिश की बूंदे वो महकी फिजाएं वो मौसम कहां सो गए।
इक अनबुझी प्यास दिल में जगा के...।

कैसे बताऊँ कि है पीर कितनी क्या बेबसी, बेकली है
यूं तो भरी भीड़ दुनिया की लेकिन सूनी तेरे बिन गली है,
वो सांसों की गरमी वो बातों की नरमी वो आंसू कहां धो गए।
इक अनबुझी प्यास दिल में जगा के... ॥

सोचा था अपनी मुहबबत का भी ताज होगा खड़ा इस जमीं पे
रिश्ते दिलों के निभाने का इक राज सीखेगी दुनिया हमीं से
हम सिसकियां लेके सीने टटोलें वो सांसें कहां बो गए।
इक अनबुझी प्यास दिल में जगा के...।
न जाने जहां में कहां खो गए॥

कुछ मुक्तक

मेरी आराधना तुम ही तुम,
शब्द की साधना तुम ही तुम।
माँगती तुमको आठों प्रहर
मेरी हर कामना तुम ही तुम

• • •

कौन जाने फिर सुकूं के पल मिलें कि न मिलें,
धुंध काली रात के पग फिर हिलें कि न हिलें,
जख्म हर लम्हा जो देता जा रहा...
वक्त से ये फिर सिलें कि न सिलें॥

• • •

मुश्किलें फिर से टलें कि न टलें,
पांव थक कर फिर चलें कि न चलें,
हर कदम पर मठ बना रखे अंधेरों ने यहां
कौन जाने बिजलियां अब फिर जलें कि न जलें॥

कुछ मुक्तक

ये उम्र के मस्तूल भी टूटे हुए
और जिंदगी के रंग सब छूटे हुए
छाँव की आशा गई जिसके तले
पेड़ थे वर्षों के वो ठूँठे हुए।

• • •

ये खुशबू कुसुम की बिखरने न देना,
नशा प्यार का यूँ उतरने न देना,
आंखों से दिल के जो रस्ते हैं जाते,
कोई और चेहरा गुजरने न देना।

• • •

मैं हूँ कुसुम गुलाब का काँटों पे खिली हूँ,
धरती हूं आंधियों से तिल-भर न हिली हूं,
जाने कहां की हिम्मत है मुझमें खुदाया...
हर चक्रव्यूह तोड़ के मंजिल से मिली हूं॥

• • •

अपावन हृदय भी सुपावन लगे हैं,
तुम्हारी हंसी मन लुभावन लगे है,
मेरे नेह के मेघ चरणों में तेरे...
उमड़ता हुआ मेरा सावन लगे है॥

छोड़ना क्यों चाहते हो?

छोड़ना क्यों चाहते हो साथ मेरा तुम प्रिये...
इक नए संबंध की मुझमें जगी जब चाह थी
त्याग, हिम्मत, हौसले की भी नहीं परवाह थी॥
खिंचते गए-खिंचते गए
इक डोर में बंध से गए।
चंचल, चपल मन बह गया
कुछ मौन होकर कह गया॥
मन भी न अपने पास था
फिर भी अटल विश्वास था।
हम तुमसे अपना हो गया
सपना ही सपना हो गया।
जिंदगी के इन थपेड़ों की भरी मजधार में
छोड़ना क्यों चाहते हो हाथ मेरा तुम प्रिये?
तुम ही बोलो बिन मेरे क्या चैन तुम पा जाओगे?
सुख के साऐ में तो बीती रैन तुम पा जाओगे?
भूलना आसां नहीं अब इस जनम शायद प्रिये
मैंने तो बस नाम तेरे जिंदगी कर दी प्रिये
आराधना पूजा में तुम ही तुम रहे
साथ से अपने आलोकित कर दो आकर साथ मेरा तुम प्रिये...

जिंदगी लगे है बदुआ

आजकल न जाने क्या हुआ
जिंदगी लगे है बदुआ...
भाग्य तेरा दोष जिसमें ये पड़ाव है
धूप ही चिलक रही कहीं न छांव है,
मुश्किलों में साथ दे वो आसरा नहीं
दूर तक हम ही हैं कोई दूसरा नहीं,
डर रही, सिमट रही, खुद से हूं लिपट रही...
आजकल न जाने क्या हुआ
जिंदगी लगे है बदुआ।

थपकियां कितनी भी दीं पर आंख न सोई
भीड़ में दुनिया के ये किंचित नहीं खोई
तृप्ति में हर प्यास में बस वो ही समाया
हम थे वो चातक कि जिसे कुछ नहीं भाया
गल्तियां उसकी थीं जुल्म कितने मैं हूँ ढो रही...
आजकल न जाने क्या हुआ
जिंदगी लगे है बदुआ...

तुम क्या जानो

तुम क्या जानो दर्द नदी का
कितनी बार सिसक कर रोई,
पांव थके फिर भी उन्मादित
आंखें भी कब की अधसोई,
वो नदियों के बीच खड़ा
इक तेरे न होने से क्या
उस सागर पर ही मरती क्यूँ
मर्म न अब तक समझा कोई॥

तुम आये नहीं

तुम आये नहीं...
तुम्हारे आने की उम्मीद बहुत थी
तुम्हारे लाख मना करने के बाद भी
क्योंकि...
प्यार में यही होता आया है सदियों से
मन का मस्तिष्क पर हावी हो जाना,
कुछ नहीं...कुछ नहीं कहते बहुत कुछ कह जाना॥
कुम्हलाया मन, सर्द यादें, नम आखें...पसरा सन्नाटा...
इनके अर्थ समझते हो क्या?
अपेक्षा कहां होती है? जानते हो क्या?
संवेदना पहचानते हो क्या?
तुम्हारे कदमों की आहट पहचानती हैं
ये राहें
ये चौखट
यहां तक कि मेरी नींद का आगोश भी।
न चाहते हुए भी ये इंतजार क्यूँ है?
थके हारे जज्बात को अब भी प्यार क्यूँ है?
अपेक्षा के बदले उपेक्षा क्यूँ
बता सकते हो क्या?
रह-रहकर मन भर आता है
आखिर ऐसा क्या नाता है?
जो तुम्हें बोझ लगता है
और...मुझे दोनों जहाँ॥

मुझे मालूम है

मेरी खुशियां खरीदी हर तरह से आज तूने पर...
मुझे मालूम है कल को रुला करके ही दम लेगा।
मुझे कांटों की आदत पड़ चुकी थी
फूल क्यूँ भेजा?
बहाने सेज के आखिर
भला ये शूल क्यों भेजा?
बहाने की जरूरत भी कहां थी सामने कहते
मुझे मालूम है खुशियां मेरी हरगिज नहीं टिकती...
उसे आखिर बुलाऊँ क्यूँ
उसे आखिर मनाऊँ क्यूँ
सुनो अब लौट भी आओ...??
लड़ाई भाग्य से बिल्कुल नहीं, ये दर्द है मन का...
उसे भी तो पता है ये
सिवा कोई नहीं उसके॥
मेरी छोटी सी दुनिया की इकाई बस उसी से है
मेरी अपनों से शामिल हर लड़ाई बस उसी से है॥

बारिश

यूं तो हर दिन जिंदगी का बोझ सा लगता है...
पर ये...
आज का मौसम
ये बारिश
अनवरत बूंदें
बदन को ठंड देतीं पर व्यथित मन को रुलातीं
वो बहुत कुछ जो कभी भी कह न पाये
वो सारे दर्द...
सारी अनकही बातें...
सभी चेहरे पे आ जातीं...

काश

काश! मेरे दर्द को सुनते समझते या
कभी महसूस कर पाते
मगर ये हो न पाया......
हम भी बस हारे जुआरी से चले आए
उन्हीं उल्टे कदम से...
जिन्हें जाने की जल्दी में न था कुछ होश आया।

मेरा ये मौन भी...

मेरा ये मौन भी बारिस में अक्सर टूट जाता है
कहीं एकांत में जी भर के रोकर मान जाता है
बगावत पर उतरता है
मगर फिर-फिर संभलता है
दिमागी दांव-पेचों से हमेशा मात खाता है ॥

घनीभूत पीड़ा

घनीभूत पीड़ा में डूबा उफनाता अकुलाता मन
घावों को सहलाता मन... ॥
इक अपने से हार गया फिर
जी भर रोकर मान गया फिर,
कच्चे धागे की कमजोरी
देखो कोई ताड़ गया फिर,
बेदम सांसें, सूनी आंखें, जगता फिर सो जाता मन
घावों को सहलाता मन... ॥
दर्द सहेजा बस जीवन भर
पूँजी में बस इतना ही सब,
हर कोई देकर ही जाता
इतने आँसू रखूँ कहाँ अब ?
तन भी भारी, मन भी भारी, हौले से कुछ गाता मन...
घावों को सहलाता मन... ॥

कब तुम याद नहीं आए हो?

कब तुम याद नहीं आए हो?
हर पल-हर दिन
सुख या दुर्दिन
पैरों की ठोकर से लेकर वज्रपात के ओर-छोर तक...
कब तुम याद नहीं आये हो?

पूरा जीवन हुआ तमाशा
असफलता, उपहास, निराशा
सुई के चुभने से लेकर साँसों के थमने के क्रम तक...
कब तुम याद नहीं आए हो?

संयम ने सौ बार टटोला
स्वाभिमान ने अक्सर तोला
सूर्य अस्त होने से लेकर सूर्योदय की कठिन घड़ी तक
कब तुम याद नहीं आए हो?

मेरा न है कभी न था

मेरा न है वो कभी न था
मैं मांगती उसकी रही,
इतनी खता रही मेरी
मैं चाहती उसको रहीं॥
मैं जानती हूँ वो गैर है
फिर भी उसे अपना कहूं?
आंखों के सब कुछ सामने है
कैसे मैं सपना कहूं?
जब भी लगा वो गैर है एहसास से लड़ती रही॥
उसको न पाना भी गलत
और हक जताना भी गलत
तस्वीर मैं दिल के दरो-दीवार पर जड़ती रही॥

एकाकी अनुराग

एकाकी अनुराग अकेलापन मेरा साथी...
सदा शांत
एकांत
दूर हो क्लान्त
सृजन नवपथ का,
खुद से खुद की बातें करना
प्रश्न पूँछना उत्तर देना
रुष्ट स्वयं से
तुष्ट स्वयं से
तालमेल का समुचित सहभागी...
एकाकी अनुराग अकेलापन मेरा साथी... ॥

सुनो अभिमन्यू

सुनो अभिमन्यु हूँ मैं
घिरी अपनों से हूँ मैं।
मुश्किलें कौरव सी हैं सौ ओर से।
आजमाने सब उठे हर छोर से... ॥
दिया खुद को वचन है...मर नहीं जाना
मुझे बच के है आना।
मैं सारे द्वार तोडूंगी
मैं सारे लक्ष्य भेदुंगी,
चुनौती मंजिलों को...मुश्किलों को
भले अर्जुन नहीं कोई...लड़ाई जो मेरी लड़ता
यहाँ भी भीम है पर युद्ध बस अभिमन्यु ही लड़ता।
सुनो इस बार भी वो भीम फिर असहाय से दीखे
जिन्हें अपनी भुजा अपनी गदा पर मान था कब से।
नये अभिमन्यु की बस कुछ कहानी है जरा हटके
जयद्रथ हैं कई सारे जो एक से एक हैं बढ़के
मगर अफसोस सबके सब ही खाली हाथ जायेंगे
पराजय साथ जाएगी मनोबल टूट जायेंगे
सुनो वीरांगना हूँ मैं, मेरा साहस नहीं थकता
रगों में रक्त है कि शांत एक पल को नहीं होता
अकेले हैं अकेलापन नहीं है
कि रहती साथ ही बल बुद्धि विद्या की पताका
जिसे बस टूट जाने की महारत है
मगर झुकना न आता॥

लेखिका परिचय

नाम	:	डॉ. कुसुम द्विवेदी 'मानसी'
जन्म तिथि	:	05-7-1984
शैक्षिक योग्यता	:	बी.एड., एम.एड., एम.ए., पी-एच.डी.
पता	:	बांस गांव कोटडीह, फैजाबाद।
		ईदगाह कॉलोनी सिविल लाइन्स, फैजाबाद (उ.प्र.)
संप्रति	:	शिक्षिका
दूरभाष नं	:	8765101064, 9455446600
पूर्व में प्रकाशित पुस्तक	:	'एक अंजुरी धूप' 2004
पिता	:	पं. खुशीराम द्विवेदी 'दिव्य' (राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त) ओजकवि, सेवानिवृत्त प्रधानाध्यापक।
माँ	:	श्रीमती सूर्यवती
बड़े भाई	:	डी.एन. द्विवेदी (डी.डी.ओ.) साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर
छोटे भाई	:	डॉ. एच.एन. द्विवेदी (प्रोफेसर बी.बी.डी.)
दीदी	:	संतोष द्विवेदी
संतति	:	मानस मिश्र 'हनु'

❑❑❑